International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

शीर्षकः योग में ईश्वर–प्रणिधान की महिमा।

विद्या किरण[1], प्रो.राजेन्द्र प्रसाद[2], डा. अनुराग पाण्डेय[3]

[1]Ph.D Scholar (Yog), Department of Kayachikitsa, Faculty of Ayurveda, Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University, Varanasi.
[2]Professor & HOD, Supervisor, Department of Kayachikitsa, Faculty of Ayurveda, Institute of Medical, Banaras Hindu University, Varanasi
[3]Assistant Professor & Co-Supervisor, Department of Vikriti Vigyan, Faculty of Ayurveda, Institute of Medical Sciences, Banaras Hindu University, Varanasi

सारांशिकाः
ईश्वर कर्म, कर्म के फल, संस्कार एवं काल से परे, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वोत्तम, सर्वगुण सम्पन्न, आनन्दमय, ऐश्वर्यों से परिपूर्ण और सभी गुरूओं के गुरू हैं। अपने सभी कर्मों को ईश्वर के प्रति समर्पित कर देना, ईश्वर–प्रणिधान है। श्रीमद्भगवत्गीता में भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि "जो भक्त सदा अनन्य भाव से प्रतिदिन निरन्तरता के साथ मेरा ही स्मरण करता रहता है। उस नित्य भक्ति से युक्त योगी को मैं सहजता अथवा बिना किसी परेशानी के शीघ्रता से ही प्राप्त हो जाता हूँ।" ईश्वर–प्रणिधान से अपने भीतर के अहंकार का नाश होता है, जिससे जीवन सरल और स्वाभाविक हो जाता है। मनुष्य जीवन का अन्तिम उद्देश्य ही है परमात्मा से मिलन, तभी परम आनन्द की प्राप्ति होगी अतः उस आनन्द अर्थात् भगवत् प्राप्ति के लिए ईश्वर–प्रणिधान आवश्यक है। मन के शुद्धतम भाव से ही ईश्वर–प्रणिधान सम्भव हो पाता है। सनातन धर्म के सभी शास्त्रों में ईश्वर–प्रणिधान की विधि पूर्वक चर्चा की गयी है। यह न केवल योगियों के लक्ष्य सिद्धि में सहायक है बल्कि सांसारिक मनुष्यों के भी सभी अभावों को दूर करने वाला है। इस प्रकार योग में ईश्वर–प्रणिधान की अनुपम महिमा वर्णित है।

शब्द कुंजी :– ईश्वर, ईश्वर–प्रणिधान, योग, परम आनन्द ।

प्रस्तावना :– महर्षि पतंजलि ने अपने योगदर्शन में ईश्वर का वर्णन निम्न सूत्रों में किया है :–

"क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरूषविशेष ईश्वरः।" (योगदर्शन 1/24)
क्लेश (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश), कर्म (कृष्ण कर्म, शुक्ल कर्म, कृष्ण–शुक्ल कर्म और अकृष्ण–अशुक्ल कर्म), विपाक (कर्म के फल), आशय (कर्मों के संस्कार/वासनाएँ) – इन चारों के सम्बन्ध से रहित जो समस्त पुरूषों से उत्तम है, वह ईश्वर है।

"तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्।" (योगदर्शन 1/25)
उस ईश्वर में सर्वज्ञता का बीज अर्थात् ज्ञान की पराकाष्ठा है।
ईश्वर सब प्रकार के शुभ गुणों, स्वाभाविक गुणों और एश्वर्यों की पराकाष्ठा है।

"पूर्वेषाम् अपि गुरूः कालेनानवच्छेदात्।" (योगदर्शन 1/26)
वह ईश्वर पूर्व उत्पन्न गुरूगणों का भी गुरू है क्योंकि वह काल से सीमित नहीं है अर्थात् सर्वकाल में विद्यमान है

"तस्य वाचकः प्रणवः।" (योगदर्शन 1/27)
उस ईश्वर का वाचक (नाम) प्रणव अर्थात् ओंकार (ॐ) है।
ईश्वर का निज नाम "ॐ" है। ओंकार को ही आदि ध्वनि भी कहा जाता है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में "ॐ" की ध्वनि प्रसारित हो रही है। अर्थात् ईश्वर के नाम का उच्चारण यह सम्पूर्ण सृष्टि /ब्रह्माण्ड कर रहा है।

"तज्जपस्तदर्थभावनम्।" (योगदर्शन 1/28)

उस ओंकार का जप और उस ईश्वर के अर्थस्वरूप का ध्यान करना चाहिए अर्थात् पुनः – पुनः चिंतन करना चाहिए।

अतः कह सकते हैं कि ईश्वर कर्म, कर्म के फल, संस्कार एवं काल से परे, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वोत्तम, सर्वगुण सम्पन्न, आनन्दमय, ऐश्वर्यों से परिपूर्ण और सभी गुरूओं के गुरू हैं। ईश्वर एक साधन है योग मार्ग में मोक्ष तक पहुँचने के लिए।

इस संसार में गुरू भी उस परमेश्वर का ही मूर्त रूप एवं प्रतिनिधि हैं। यह परम् सत्य है कि ईश्वर ही परम् गुरू है, लेकिन उस ईश्वर तक पहुँचाने वाले गुरू भी सत्य हैं।

ईश्वर–प्रणिधान क्या है ?

ईश्वर का तात्पर्य दिव्य, सर्वोच्च शक्ति/सर्वोच्च सत्ता से है जबकि प्रणिधान का तात्पर्य समर्पण है। अतः **अपने सभी कर्मों को ईश्वर के प्रति समर्पित कर देना, ईश्वर–प्रणिधान है।**

- यह समर्पण व्यक्तिगत जिम्मेदारी छोड़ने के बारे में नहीं है, बल्कि दिव्य मार्गदर्शन पर विश्वास करने और स्वयं को एक बड़े उद्देश्य के साथ जोड़ने के बारे में है।
- ईश्वर–प्रणिधान सर्वोच्च भक्ति है। यह सर्वोच्च समर्पण है अपने ईष्ट के प्रति।
- ईश्वर–प्रणिधान अकेला ऐसा भाव है जो मनुष्य के सारे अभाव दूर कर सकता है।
- जीवन की उलझनें हों या मन की मलिनता, चिंता, तनाव, भय, अपराधबोध, ग्लानि सब कुछ एक भाव से ही समाप्त हो जाता है।
- वह भाव जिससे सारी सहजता, सरलता, निर्भयता और स्वतंत्रता आती है।
- लेकिन इस भाव में प्रतिष्ठित होने के लिए सबसे बड़े साहस अर्थात् ईश्वर पर पूर्णरूपेण आश्रित होना पड़ता है और यही सर्वोच्च साहस साधक की रक्षा करता है।

"ईश्वर प्रणिधानाद्वा।" (योगदर्शन 1/23)

महर्षि पतंजलि कहते हैं– ईश्वर के प्रति भक्ति से भी निर्बीज समाधि की सिद्धि शीघ्र हो जाती है।

- अपने को सब प्रकार से ईश्वर के अधीन समझकर, स्वयं को ईश्वर समर्पित करके, निमित्त बनकर फलाकांक्षा से पूर्ण रूप से मुक्त होकर, मन, वचन और कर्म से सबकुछ ईश्वर की ही पूजा, अर्चना और उपासना कर रहा हूँ ऐसा उदात्त भाव ईश्वर–प्रणिधान कहलाता है और यह शीघ्र समाधि लाभ देने वाला है।
- ईश्वर–प्रणिधान आश्रय में जीने की कला है जो व्यक्ति को सारी चिंताओं से, अज्ञात के भय से, घबराहट और उलझन से बचाती है।
- धन्य हो जाता है वह जीवन जो ईश्वर–प्रणिधान साधना के आधार पर जीना आरम्भ कर देता है।

विभिन्न शास्त्रों में ईश्वर एवं ईश्वर–प्रणिधान की महिमा का वर्णन :–

ईशावास्योपनिषद् के अनुसार–

"ॐ ईशा वास्यमिदम् सर्वम् यत्किच जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम् ।। 1।।"

अर्थात् "अखिल ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी जड़–चेतनस्वरूप जगत् है, यह समस्त ईश्वर से व्याप्त है। उस ईश्वर को साथ रखते हुए त्यागपूर्वक भोग करना है, इसमें आसक्त नही होना है, क्योंकि धन, भोग्य–पदार्थ किसका है? अर्थात् किसी का भी नही है, सब ईश्वर का ही है।"

"कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतम् समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।। 2।।"

अर्थात् "इस जगत् में शास्त्रनियत कर्मों को करते हुए ही सौ वर्षों तक जीने की इच्छा करनी चाहिए। इस प्रकार किये जाने वाले कर्म मनुष्य में लिप्त नहीं होंगे इससे भिन्न अन्य कोई मार्ग नहीं है जिससे कि मनुष्य कर्म–बन्धन से मुक्त हो सके।"

"प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यम् शरवत्तन्मयो भवेत्।। 2मुण्डक/2खण्ड/4।।"

मुण्डकोपनिषद् के अनुसार– "परमेश्वर का वाचक प्रणव (ओंकार) ही धनुष है, आत्मा (जीवात्मा) ही बाण है और परब्रह्म परमेश्वर ही उसके लक्ष्य कहे जाते हैं। प्रमादरहित मनुष्य द्वारा ही बेधे जाने योग्य है। अतः उसे बेधकर बाण की तरह उसमें अर्थात् ब्रह्म में तन्मय हो जाना चाहिए।"

माण्डूक्योपनिषद् के अनुसार– ओंकार की अ–उ–म् इन तीन मात्राओं द्वारा ब्रह्म के सगुण (जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति) तथा निर्गुण (तुरीय) की उपासना मनुष्य को करनी चाहिए। ॐ यह एक छोटा–सा अक्षर है, परन्तु निखिल संसार इसी एक अक्षर की व्याख्या है। भूत–वर्तमान–भविष्यत् सब ओंकार का ही विस्तार है। पूर्णब्रह्म परमात्मा साकार भी है, निराकार भी है तथा साकार–निराकार दोनों से रहित भी हैं। सम्पूर्ण जगत् उन्हीं का स्वरूप है और वे इससे सर्वथा अलग भी हैं। वे सर्वगुणों से रहित निर्विशेष भी हैं और सर्वगुणसम्पन्न भी – यह मानना ही उन्हें सर्वांगपूर्ण मानना है।

"तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ।। 8/7।।"
श्रीमद्भगवत्गीता में श्रीकृष्ण जी अर्जुन से कहते हैं कि "हे अर्जुन तू सब समय में मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर। मेरे में अर्पण किये हुए मन बुद्धि से युक्त हुआ निःसंदेह मुझे ही प्राप्त होगा।" यहॉ हम मनुष्यों के लिए यह संदेश है कि हम अपने जीवन के सभी कर्तव्य–कर्मों को ईश्वर स्मरण के साथ ही करते रहें। ऐसा करने से कर्म–बन्धन ढ़ीले पड़ने लगते है और परमात्मा से निकटता सुनिश्चित हो जाती है।

"अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः।। 8/14।।"
"जो भक्त सदा अनन्य भाव से प्रतिदिन निरन्तरता के साथ मेरा ही स्मरण करता रहता है। उस नित्य भक्ति से युक्त योगी को मैं सहजता अथवा बिना किसी परेशानी के शीघ्रता से ही प्राप्त हो जाता हूँ।" अर्थात् भक्ति मार्ग किसी अन्य प्रयत्न के बिना ही, केवल सर्मपण से ही सहज और सुलभ है।

"पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः।
वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्साम यजुरेव च।। 9/17।।"
वासुदेव कहते हैं कि "इस सम्पूर्ण जगत् (विश्व) का पिता भी मै हूँ, माता भी मैं हूँ, पितामह भी मैं हूँ। जानने योग्य भी मैं ही हूँ, पवित्र ओंकार भी मैं हूँ, वेदों में ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी मैं ही हूँ।"

"गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् ।। 9/18।।"
"सबको गति प्रदान करने वाला, सबका स्वामी अर्थात् भरण–पोषण करने वाला मैं ही हूँ। सबको देखने वाला भी मैं ही हूँ, सबको आश्रय देने वाला भी मैं हूँ, सबका रक्षक भी मैं ही हूँ, सबका उपकार/भला करने करने वाला भी मैं हूँ, सबकी उत्पत्ति करने वाला भी मैं हूँ, सबको नष्ट करने वाला भी मैं हूँ, सबको स्थित करने वाला भी मैं हूँ, निधान (प्रलय काल में सम्पूर्ण भूत सूक्ष्म रूप से जिसमें लय होते हैं, उसका नाम निधान है) भी मैं हूँ। मैं ही अविनाशी हूँ और सबका बीज रूप भी मैं ही हूँ।"

"अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।। 9/22।।"
"जो भी भक्त अनन्य भक्ति भाव से मुझ पर ही आश्रित होकर नित्य रूप से मेरा चिंतन व मेरी उपासना करते हैं। उन सभी योगयुक्त भक्तों के सभी अभावों/आवश्यकताओं को मैं ही पूरा करता हूँ।"

"मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरू।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ।। 9/34।।"
"मुझे प्राप्त करने के लिए तुम अपने चित्त को मेरे अन्दर लगाकर, मेरे भक्त बनो, मेरा ही यजन अर्थात् मेरी ही पूजा करो, मुझे नमस्कार करो। इस प्रकार तुम मेरे प्रति समर्पित भाव रखते हुए अपने मन को मुझमें युक्त करने से ही तुम निश्चित रूप से मुझे ही प्राप्त करोगे।"

"तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्।। 18/62।।"
"हे भारत! सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही अनन्य शरण को प्राप्त हो। उस परमात्मा की कृपा से ही परम शान्ति को और सनातन परमधाम को प्राप्त होगा।"

"क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।। 9/31।।"
"अनन्य भक्ति भाव से मेरा भजन करने वाला वह दुष्ट/दुराचारी मनुष्य अति शीघ्र ही धर्मात्मा बन जाता है और अनन्त शान्ति प्राप्त करता है। हे कौन्तेय ! तुम इस बात को अच्छी प्रकार से सुनिश्चित कर लो कि मेरा भक्त कभी भी नष्ट नहीं होता है।

ईश्वर–प्रणिधान करने के अनेकों लाभ हैं :–

- ईश्वर–प्रणिधान से अपने भीतर के अहंकार का नाश होता है जो कि कई दुर्गुणों का समूह होता है। जब हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि सब कुछ ईश्वर का है, सब उन्होंने ही किया, मैं तो मात्र माध्यम बना तो भीतर का अहंकार जाता रहता है और ईश्वर के प्रति प्रेम का भाव होता है। अतः अहंकार के त्याग के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- ईश्वर–प्रणिधान से जीवन सरल और स्वाभाविक हो जाता है। बड़े से बड़े दुःख आने पर भी व्यक्ति विचलित नहीं होता। महर्षि पतंजलि के अनुसार मनुष्य जब से संसार में आता है तब से वह 14 प्रकार के विघ्नों (व्याधि, स्त्यान, संशय, प्रमाद, आलस्य, अविरति, भ्रान्तिदर्शन, अलब्धभूमिकत्व, अनवस्थितत्व इसके साथ ही दुःख, दौर्मनस्य, अंगमेजयत्व, श्वॉस, प्रश्वॉस) से घिरा रहता है लेकिन इन विघ्नों को दूर करने के लिए एक तत्व का अभ्यास करना चाहिए अतः दुःख के पार जाने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- जीव के बारम्बार आवागमन के चक्र से छूटने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- ईश्वर–प्रणिधान घाटे का सौदा नहीं है क्योंकि यह वह आध्यात्मिक यात्रा है जिस पर जितना चल पड़े, वह कभी नष्ट नहीं होता। अगली यात्रा उसके आगे से ही शुरू होगी। इसलिए एक जन्म, दो जन्म न सही कई जन्मों में सही योग के अन्तिम लक्ष्य को एक दिन पा ही लेंगे। इसलिए मनुष्य जन्म की सार्थकता के लिए बिना देर किए ईश्वर–प्रणिधान अवश्य करें।
- मनुष्य जीवन का अन्तिम उद्देश्य ही है परमात्मा से मिलन, तभी परम आनन्द की प्राप्ति होगी अतः उस आनन्द अर्थात् भगवत् प्राप्ति के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें। (गीता 12/10)
- ईश्वर–प्रणिधान करने से मनुष्य का यह जन्म और आगे की यात्रा भी सुधर जाता है।
- ईश्वर के निरन्तर चिंतन से उनके गुण जैसे– निडरता, चित्त की शुद्धता, ज्ञान और योग में आस्था, कोमलता आदि हमारे भीतर आने लगते हैं और हम कहीं अधिक सकारात्मक सोच और योग्य व्यक्तित्व वाले बन जाते हैं। अतः दैवीय गुणों से परिपूर्ण होने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें। (गीता 16/1,2,3)
- आसुरी वृत्ति के नाश के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें। (गीता 16/4)
- ईश्वर–प्रणिधान करने वाला व्यक्ति संसार में रहते हुए भी संसार से दूर रहता है, अतः वह अपने और परिवार व समाज के लिए कहीं अधिक उपयोगी होता है क्योंकि उसका जीवन त्यागपूर्वक हो जाता है।
- अपने कार्यों को कुशलता पूर्वक करने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- सजगता और जागरूकता के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- संयम और संतोष की प्राप्ति के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- जीवन प्रबन्धन के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- ईश्वर को अपना साथी और सच्चा मित्र बनाने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- सकारात्मक ऊर्जा से परिपूर्ण रहने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- अविद्या/अज्ञानता जो सभी दुःखों की जननी कही गयी है, उसके नाश के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- अपने भीतर के विकारों के नाश के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- मन की निर्मलता, व्यक्तित्व व चरित्र निर्माण के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- र्निभार और निश्चिन्त जीवन के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- अपने जीवन को सुख–समृद्धि, आनन्द और ऐश्वर्य से परिपूर्ण करने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।
- स्वयं से प्रेम करने के साथ ही प्राणि मात्र से प्रेम करने के लिए ईश्वर–प्रणिधान करें।

ईश्वर–प्रणिधान कैसे करे ?
रामचरित मानस में अरण्यकाण्ड में वर्णित नवधा भक्ति जो प्रभु श्रीराम माता शबरी से कहते हैं, जो इस प्रकार है :–
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा । दूसरि रति मम कथा प्रसंगा ।।
गुर पद पंकज सेवा , तीसरि भगति अमान ।
चौथि भगति मम गुन, गन, करइ कपट तजि गान ।।
मंत्र जाप मम दृढ़ बिस्वासा । पंचम भजन सो वेद प्रकासा ।।

छठ दम सील बिरति बहु करमा । निरत निरंतर सज्जन धरमा ।।
सातवँ सम मोहि मय जग देखा । मोतें संत अधिक करि लेखा ।।
आठवँ जथालाभ संतोषा । सपनेहुँ नहिं देखइ परदोषा ।।
नवम सरल सब सन छलहीना । मम भरोस हियँ हरष न दीना ।।
नव महुँ एकउ जिन्ह कें होई । नारि पुरूष सचराचर कोई ।।
मम दरसन फल परम अनूपा । जीव पाव निज सहज सरूपा ।।

नवधा भक्ति		
1.	प्रथम भक्ति	सन्तजनों का संग ।
2.	दूसरी भक्ति	प्रभु की कथा में प्रेम करना ।
3.	तीसरी भक्ति	मान रहित होकर गुरू के चरण–कमलों की सेवा करना ।
4.	चौथी भक्ति	कपट त्याग कर प्रभु के गुण–समूहों का गान करना ।
5.	पॉचवीं भक्ति	दृढ़ विश्वास के साथ प्रभु के मंत्र का जाप ।
6.	छठीं भक्ति	इन्द्रियों का दमन, शील स्वभाव, बहुत से कर्मों से विरक्ति और धर्म में तत्परता ।
7.	सातवीं भक्ति	समान भाव से संसार को मुझ में व्याप्त देखना और मुझसे भी अधिक सन्तजनों को समझना ।
8.	आठवीं भक्ति	कुछ भी लाभ हो उसी में सन्तोष करना तथा इसके अतिरिक्त स्वप्न में भी दूसरों के दोष न देखना ।
9.	नवीं भक्ति	सबके साथ सीधा बर्ताव करना, निश्छल व्यवहार, हृदय में मेरा भरोसा और कभी अति हर्षित तथा अति दीन न होना ।
नवधा भक्ति का अनुपम लाभ :– जीव अपने स्वाभाविक स्वरूप को प्राप्त होता है।		

ईश्वर–प्रणिधान कब करें ?

- जिस क्षण शास्त्रों के स्वाध्याय या गुरूजनों के द्वारा दिये ज्ञान से ईश्वर के बारे में जानें उसी क्षण अविलम्ब ईश्वर को मानें और ईश्वर–प्रणिधान आरम्भ कर दें, चाहे कोई भी उम्र क्यों न हो, क्योंकि हमारे शास्त्र झूठे नहीं । ये पूरी तरह से सत्य और प्रामाणिक हैं। स्वामी योगानन्द परमहंस जी कहते हैं कि यदि हम ईश्वर की तरफ एक कदम बढ़ाते हैं तो स्वयं ईश्वर हमारी तरफ सौ कदम चलकर आते हैं।
- हर क्षण स्मरण रखें मेरे साथ ईश्वर हैं।
- रात को सोने से पहले
- सुबह जागने के तुरन्त बाद
- जब भी मन विचलित हो,
- क्या करें और क्या न करें की स्थिति में
- जब सारे रास्ते बन्द नजर आये तब ईश्वर–प्रणिधान करें, क्योंकि ईश्वर हम सभी के मार्गदर्शक हैं।

ईश्वर भक्ति से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्य :–

नारद भक्ति सूत्र की भक्ति, समर्पण और ईश्वर के प्रति प्रेम की शिक्षाओं का गुणात्मक विश्लेषण करके अन्वेषण करता है। प्रेमपूर्ण भक्ति, ध्यान, निःस्वार्थ सेवा और आध्यात्मिक संगति जैसे अभ्यासों के माध्यम से व्यक्ति जीवन की चुनौतियों के बीच लचीलापन, भावनात्मक संतुलन और आन्तरिक शक्ति विकसित कर सकते हैं। भक्ति योग की मूल शिक्षाओं को अपनाकर और उन्हें दैनिक जीवन में एकीकृत करके, व्यक्ति मन की जटिलताओं को समझ सकते हैं और स्वयं, दूसरों व दिव्य के साथ गहरे सम्बन्ध की भावना विकसित कर सकते हैं। अन्ततः भक्ति योग व्यक्तियों को उनके जीवन में अर्थ, उद्देश्य और पूर्णता खोजने के लिए एक परिवर्तनकारी मार्ग प्रदान करता है, जिससे बेहतर मानसिक स्वास्थ्य और खुशी मिलती है।

भारतीय आध्यात्मिक दर्शन के दो महत्वपूर्ण कार्य, जो आध्यात्मिक विकास के लिए भिन्न लेकिन पूरक तरीके प्रदान करते हैं। वे हैं– पतंजलि योगसूत्र और श्रीमद् भगवद्गीता । श्रीमद् भगवद्गीता में वर्णित भक्तियोग भक्ति, प्रेम, ईश्वर के प्रति समर्पण और मुक्ति को बढ़ावा देता है। जबकि पतंजलि योगसूत्र में वर्णित क्रिया योग आत्म–अनुशासन, आत्म–अध्ययन और ईश्वर के प्रति समर्पण सहित अनुशासित गतिविधियों पर जोर देता है। दोनों ही ग्रन्थ ईश्वर के प्रति समर्पण व ध्यान, इसके व्यावहारिक उपयोगों और आध्यात्मिक मुक्ति में इसके योगदान की गहन व्याख्या प्रदान करते हैं।

मानव ईश्वर से है, शाश्वत है और अनुभूति व अनुभव में सक्षम है। मानव जीवन का उद्देश्य शास्त्र निर्धारित जीवन जीना और दुनियॉ के भ्रम से वैराग्य प्राप्त करके परम सत्य ईश्वर के साथ एक होना है। मृत्यु जीवन का एक हिस्सा है, न कि वह जो इसे समाप्त करती है। मृत्यु का क्षण परम परिवर्तन, मोक्ष का अवसर है। अतः सदाचारी जीवन जीने की आवश्यकता पर बल देना ही जीवन की सार्थकता है।

अध्यात्म और विज्ञान, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, समानान्तर रूप से सृष्टिकर्ता की खोज करते हैं। विज्ञान इस बात का अन्वेषण करता है कि वस्तुओं की रचना कैसे हुई, और अध्यात्म इस बात का उत्तर देता है कि सृष्टि क्यों हुई ? मानव मन और हृदय यदि दोनों विकसित होते हैं, तो वे एक बिन्दु पर मिलते हैं, जिससे मनुष्य का आध्यात्मिक विकास उच्चतर होता है।

जहॉ आधुनिकीकरण ने जीवनशैली में महत्वपूर्ण बदलाव लाए हैं, वहीं नैतिक चुनौतियॉ भी पैदा की हैं। जिनका समाधान एक मजबूत नैतिक ढॉचे के माध्यम से ही सम्भव है। ऋग्वेद, भगवद्गीता और उपनिषद् जैसे भारतीय धार्मिक ग्रन्थ नैतिकता के लिए एक आधारभूत ढॉचा प्रदान करते हैं। धर्म की नैतिक अनिवार्यताओं को वैज्ञानिक प्रगति के साथ एकीकृत करना तकनीकी और नैतिक विकास दोनों को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है और भारतीय दर्शन इस एकीकरण के लिए बहुमूल्य अन्तर्दृष्टि प्रदान करता है।

निष्कर्ष :–

सभी शास्त्रों में ईश्वर–प्रणिधान की महिमा बारम्बार की गयी है। इससे सिद्ध होता है कि ईश्वर–प्रणिधान ही मनुष्य जीवन की सार्थकता है। यह न केवल योगियों के लक्ष्य सिद्धि में सहायक है बल्कि सांसारिक मनुष्यों के भी सभी अभावों को दूर करने वाला है। विभिन्न शोधों से यह स्पष्ट होता है कि ईश्वर प्रणिधान, व्यक्तियों को उनके जीवन में अर्थ, उद्देश्य और पूर्णता खोजने के लिए एक परिवर्तनकारी मार्ग प्रदान करता है, जिससे बेहतर मानसिक स्वास्थ्य और खुशी मिलती है। ईश्वर–प्रणिधान से मनुष्य यह जान लेता है कि हम केवल शरीर नहीं बल्कि आत्मा हैं। अतः आत्मिक स्तर पर सोचने, समझने और देखने पर भेदबुद्धि मिट जाती है। तब कोई किसी का मजाक नहीं बना सकता, किसी को प्रताड़ित नहीं कर सकता, यानि अपनी शक्तियों का किसी भी तरह से कोई दुरूपयोग नहीं कर सकता। तब यदि होगा तो केवल सम्मान, प्रेम और शान्ति।

तभी वासुदेव कहते हैं –

"सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।। गीता 18/66।।"

अर्थात् "सब धर्मों के भेद मिटाकर एक मेरी शरणागत हो जा।
मैं तुम्हें पाप से मुक्ति दूँगा, शोक न कर मेरी भक्ति में खो जा ।।"

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. डा. सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव, पातंजल योगदर्शनम्, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, भारत
2. श्रीमद् भगवद्गीता, प्रकाशक श्री गोविन्द भवन कार्यालय, गीता प्रेस, गोरखपुर
3. हरिकृष्णदास गोयन्दका, ईशादि नौ उपनिषद्, प्रकाशक एवं मुद्रकः गीताप्रेस गोरखपुर–273005
4. तुलसीदास जी कृत श्रीमद् रामचरित–मानस, प्रकाशक : श्री दुर्गा पुस्तक भण्डार, कक्कर नगर, प्रयागराज
5. Arpit Kumar LM, "Bhakti Yoga and Mental Health : Insights from the Narada Bhakti Sutra", DOI : 10.5281/zenodo.15802829
6. S.Kanta, S.Yadao "The Synthesis of Kriya Yoga &Bhakti Yoga : An Inquiry into Patanjali Yog Sutra and Shrimad Bhagwat Geeta" ArimaaNokku Journal, ISSN : 2320-4842
7. Hamilton Inbadas, "Indian Philosophical foundations of Spirituality at the end of life" http://doi.org/10.1080/13576275.2017.1351936, Online Publish : 19 July 2017
8. Zahid Khan, "Science and Spirituality", Published by Khanverlog-vohl-Germony ISBN : 978-3-944066-13
9. 9. Dr. Deepak Kumar Gupta, "Spiritual Foumdations in Contemporary India : The Role of Religion in Modernity", Journal of Interdisciplinary and Multidisciplinary Research (JIMR), E-ISSN:1936-6264, Vol. 19 Issue09,Sep-2024
10. www.patanjaliyogsutra.in